ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

आचार्य भरतकृत नाट्यशास्त्र में नायिका विभाजन

डॉ0 पंकज मिश्र
प्रवक्ता–संस्कृत
चन्द्रशेखर पाण्डेय महाविद्यालय,
बबुरिहा, कौंधा, फैजाबाद

स्त्री पुरुष और पौरुष की जननी है, ममत्त्व, वात्सल्य, प्रेम, कोमलता, अनुराग, सौन्दर्य तथा आकर्षण का अजस्र स्रोत है। उसके अन्तःकरण में सृष्टि की समस्त शक्तियों का अगाध सागर लहराता है क्योंकि वह सृष्टि की उत्पादिका, पालिका और गृहस्थ जीवन की प्रवाहमयी सरिता है। उसी के फलस्वरूप परिवार जैसी महान् संस्था का उद्भव हुआ है। वह समाज और राष्ट्र के विकास की सशक्त गतिमान धारा है। स्त्री की वृत्ति त्रिगुणात्मक है– आस्वादरूप, आस्वाद्यरूप और आस्वादकरूप। इसके फलस्वरूप वह स्वयं आकर्षक का केन्द्र बिन्दु है और दूसरे के प्रति आकर्षित होने की सामर्थ्य भी रखती है। सौन्दर्य के इस विशिष्ट 'उद्गम' में मानवमन की रागात्मक वृत्तियाँ आदिकाल से ही उद्वेलित होती रही हैं। क्योंकि भावानुभूति और सौन्दर्यानुभूति मानव का श्रेष्ठ कलात्मक गुण है जिसके फलस्वरूप वह आनन्द की चरम अनुभूति तक अपने अन्तस् में उठने वाली अनुभूतियों तक पहुँचता है। इस आनन्द की अनुभूति उसे निवृत्ति के वास्तविक मार्ग को प्रदर्शित करती है। अतः पूर्णत्व की प्राप्ति के लिए प्रकृतिस्वरूपा स्त्री और पुरुष का संयोग अत्यन्त आवश्यक है। सम्भवतः इसी कारण से देवादिदेव शिव को 'अर्द्धनारीश्वर' की स×ज्ञा से विभूषित किया गया है। स्मृतिकार मनु का कथन है– ''जो पुरुष है, वही स्त्री हैं''–

एतावनेव पुरुषे यज्जायाऽऽत्मा प्रजेतिह।
विप्राः प्राहुस्तवा चैतद्यो भर्ता सा स्मृता›ना।।[1]

स्मृतिकार के इस उदाहरण से ज्ञात होता है कि आदिकाल से स्त्री और पुरुष को समान रूप से समाज का आवश्यक अ" माना गया था। आचार्य भरत के नाट्यशास्त्र से भी स्पष्ट होता है कि नाटकीय वृत्तियों भारती, सात्त्वती तथा आरभटी के अतिरिक्त कैशिकी वृत्ति के अन्तर्गत नृत्य, गीत, विलास, काम–क्रीड़ा युक्त कोमल शृंगारी व्यापार, सुकुमार केश विन्यास सम्मिलित है। अतः दिव्य रूप में स्त्री पात्रों के अवतरण की धारणा नाट्यशास्त्र में विकसित हुई।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

ब्रह्मा जी का भरत के प्रति कथन है– कैशिकी वृत्ति को नाट्य को सम्मिलित करो।[2] इस पर भरत ने इन्द्र से अनुरोध किया कि कैशिकी वृत्ति हेतु वे स्त्री पात्रों को उपलब्ध करायें। इन्द्र ने भरत के अनुरोध पर नाट्य और चेष्टाऽल¿ारों में कुशल मंजुवेशी, सुवेशी और मिश्रवेशी आदि अप्सराओं की सृष्टि करके उन्हें नाट्य में कैशिकी के प्रयोग के लिए भरत को प्रदान किया।

स्त्री–पात्रों की भूमिका अत्यन्त, प्राचीनकाल से नाट्य में सम्मिलित थी, जिसकी विस्तृत विवेचना एवं उनके श्रेणी विभाजन की विभेदक शैली भरत के नाट्यशास्त्र में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। संस्कृत नाट्याचार्यों ने नायक की पत्नी या प्रेमिका को नायिका के रूप में स्वीकृति दिया है।[3] वास्तव में नाटक का संविधान स्त्रीपात्रों के चारों ओर घूमता है क्योंकि नाटकीय कार्य–व्यापार को नायक–नायिका की समग्रता या सह–अस्तित्व के साथ फलागम तक पहुँचने के उद्देश्य से ही पूर्णता मिलती है।

सिद्धान्त पक्ष–

भारतीय काव्य–शास्त्र की आदिकालीन परम्परा से ही नायिका के भेद का आरम्भ होता है। सर्वप्रथम आचार्य भरत ने नाट्यशास्त्र में नायिकाओं का विस्तृत एवं सूक्ष्म भेद प्रस्तुत किया है। प्राचीनतम परम्परा के अनुसार नाट्यशास्त्र के नायिका–विभाजन के सर्वप्रथम प्रवर्तक आचार्य भरत ने इसकी नींव रखी एवं इसका उत्तरोत्तर विकास परवर्ती आचार्यों ने किया। किन्तु परवर्ती आचार्यों द्वारा नायिका–भेद में भरत कालीन मत को पूर्णतः स्वीकार नहीं किया गया। अतः भरत सम्मत–मत एवं परवर्ती आचार्यों के मतों को पृथक्–पृथक् करना समीचीन होगा।[4]

आचार्य भरत ने स्त्री को सुख का मूल तथा कामभाव का आलम्बन मानकर विस्तार तथा सूक्ष्मता के साथ नायिका विभाजन को प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार नायिका भेद के पाँच आधार हैं– स्त्री की सामाजिक– प्रतिष्ठा का आधार, आचरण की पवित्रता का आधार, काम की विभिन्न दशा, अप्र संरचना प्रकृतिगत आधार। इस आधार पर स्त्री के आ"िक सौन्दर्य के साथ–साथ शील सौजन्य और जीवन की प्रवृत्ति तथा अवस्था को समुचित महत्त्व दिया है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आचार्य भरत ने नायिकाओं का वर्गीकरण करते हुए तत्कालीन स्त्री की सामाजिक प्रतिष्ठा, एवं आचरण के प्रति लोक विश्वास एवं वैदिक धारणाओं को ध्यान में रखा होगा किन्तु स्त्री की स्त्रियोचित विभिन्न दशाओं का अवलम्बन भी उन्होंने ध्यान में रखा होगा जिसके आधार पर भी उन्होंने अन्यभेद किये। आ"िक सौष्ठव एवं उसके शील को भी उचित स्थान प्रदान किया।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

सामाजिक स्थिति का आधार–

यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि स्त्री समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। स्त्रियों का समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपना अलग–अलग स्थान है। इस कारण सामाजिक प्रतिष्ठा के अनुसार उसकी स्थितियाँ भिन्न–भिन्न हैं। क्योंकि जिस प्रकार से नायकों की भिन्न–भिन्न सामाजिक स्थितियाँ होती हैं उसी प्रकार भरतमुनि ने नायिकाओं के चार प्रकार बताये हैं– दिव्या, नृपपत्नी, कुलस्त्री, गणिका। प्राकृतिक रूप से इन चारों प्रकार की नायिकाओं का अलग–अलग नायकों से सम्बन्ध होने से इन चारों प्रकार की नायिकाओं का अलग–अलग नायकों से सम्बन्ध होने के कारण इनके पुनश्च चार गुणात्मक भेद हो जाते हैं– ललिता, उदात्ता, धीरा, निभृता। यह प्राकृतिक गुण नायकों के सदृश ही नायिकाओं में भी उपलब्ध है। दिव्या और नृपपत्नी को प्रथम श्रेणी का स्त्री–पात्र कहा जा सकता है। जिसमें उपर्युक्त चारों गुण समाहित हो किन्तु कुलाप्रना में उदात्त और निभृत दो ही गुण हैं। इसीतरह गणिका में भी ललिता और उदात्ता दो ही गुण होते हैं। भरत ने गणिका के समान शिल्पकारिका नामक पाँचवें भेद को भी बताया है जो गणिका की भाँति ललिता और उदात्ता गुणों से युक्त होती है। भरत सम्मत इस मत का प्रयोग परवर्ती कालिदास, शूद्रक, भवभूति आदि ने किया है। कालिदास की नायिकायें दिव्या और नृपपत्नी हैं। यद्यपि कुछ आचार्यों ने भरत सम्मत सामाजिक प्रतिष्ठा के आधार पर नायिका विभाजन को ऐच्छिक और सिद्धान्तहीन कहकर आलोचना की है।

किन्तु भरतकालीन सामाजिक परिस्थितियों का चिन्तन करने पर यह प्रतीत होता है कि भरत सम्मत मत का आधार समीचीन है क्योंकि तत्कालीन स्त्री की स्थिति के समुचित मूल्यांकन को दृष्टि में रखते हुए ही उन्होंने यह विभाजन किया था, जिसे ऐच्छिक या सिद्धान्तहीन नहीं कहा जा सकता। परवर्ती आचार्यों की समकालीन परिस्थितियों के अनुसार स्त्री की सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार बदलता रहता है। जिसका प्रभाव घटनाचक्र के अनुरूप नाट्याचार्यों पर पड़ा तथा नायिकाओं का भेद करते समय उन्होंने उसे सम्प्रेषित करने का प्रयास किया। अतः भरत का मत नायिका विभाजन के लिए आधार शिक्षा के समान है।

आचरण की पवित्रता का आधार–

नाट्यशास्त्र के 24वें अध्याय से विदित होता है कि स्त्रियों के प्रति किये गये उपचार के दो भेद होते हैं– स्त्री और पुरुषों का पारस्परिक प्रणय–व्यापार (कामोपचार) जो नाट्यधर्मी विद्या के अनुसार किया जाता है, वह दो प्रकार का होता है– बाह्य, आभ्यन्तर। इसमें आभ्यन्तर उपचार राजाओं द्वारा किया जाता है। जिसका प्रदर्शन नाटक

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

में तो होता है किन्तु नाट्य के अन्य भेदों में नहीं होता है तथा बाह्योपचार का निष्पादन प्रकरण में निबद्ध किया जाता है।[5] फिर उसी उपचार के सन्दर्भ में आचार्य भरत ने स्त्रियों की त्रिविध प्रकृति के अनुसार उसके आचरण की शुद्धता एवं अशुद्धता का मूल्यांकन किया है। उनका कहना है कि प्रकृति तीन प्रकार की होती है– बाह्य, आभ्यन्तर और बाह्याभ्यन्तर प्रकृति। जो स्त्रियाँ उच्चकुलोत्पन्न होती है और जिनके आचरण में पवित्रता होती है उन्हें आभ्यन्तर प्रकृति वाली नारी कहा जाता है। वेश्या या गणिका को बाह्य प्रकृति नारी कहा जाता है। अन्तःपुर में रहने वाली स्त्री जिसका चरित्र अखण्डित हो ऐसी गणिका की कन्या बाह्यान्तर या मिश्र प्रकृति वाली होती है।

यदि वह कुलीन स्त्री राजकन्या हो तो ऐसी स्थिति में उसे 'मिश्रप्रकृति' की स×ज्ञा दिया गया है।[6] यद्यपि ऐसी स्त्री गणिका ही होती है। किन्तु उसका आचरण अत्यन्त पवित्र होता है। राजा के अन्तःपुर में कुलजा या द्विव्या›ना स्त्री का ही प्रवेश माना गया है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आचार्य भरत ने तत्कालीन स्त्री की सामाजिक स्थिति एवं उसकी भिन्न प्रकार की आचरणगत पवित्रता का आधार स्वीकार किया होगा। यद्यपि बाह्य या आभ्यन्तर प्रकृति के आधार पर परवर्ती आचार्यों ने इसकी आलोचना की है फिर भी भरत के समकालीन आचार्यों द्वारा इस मत का समर्थन इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि भरत के आचरण की पवित्रता का आधार कुछ परिस्थितिजन्य स्थितियों के कारण उचित ही है।

कामभावना की स्थिति का आधार–

आचार्य भरत ने नारी प्रधान कृतियों के लिए नायक–नायिका के आठ भेद किये हैं। जब नायिका का नायक से मिलन हो पाता है तो नायिका के क्या मनोभाव होते हैं–इन्हीं प्रतिक्रियाओं के आधार पर भरत ने यह विभाजन किया है। नायिका के मन में नायक के प्रति अनादर, उपेक्षा या परदेश जाने पर विप्रलम्भ शृंगार का भाव आता है यह नाट्य का आवश्यक तत्त्व है। भरत द्वारा किया गया यह आठ भेद परवर्ती आचार्यों ने भी माना है। उनके द्वारा किये गये आठ भेद इस प्रकार हैं– वासकसज्जा, विरहोत्कण्ठिता, स्वाधीनपतिका, कलहान्तरिता, खण्डिता, विप्रलब्धा, प्रोषितभर्तृका तथा अभिसारिका।[7]

वासकसज्जा नायिका का वर्णन करते हुए आचार्य भरत ने चिन्हित किया है कि जब नायिका वेशभूषा से पूर्णतया सजधज कर नायक या प्रियतम की प्रतीक्षा करती है, तब ऐसी नायिका 'वासकसज्जा' नायिका कहलाती है। वह उचित तथा आकर्षक वस्त्राभूषणों

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

को सम्यक् रूपेण धारण करती है। तथा कामातुर होकर अपने प्रिय की राह देखती है। जब नायक उचित समय पर नहीं आता, तब इसे 'विरहोत्कण्ठिता' नायिका कहते हैं। यद्यपि नायिका को पता रहता है कि उसका प्रियतम अवश्य आयेगा किन्तु उसकी देरी के कारण वह उत्कठित हो जाती है। क्योंकि उसके हृदय में उहा–पोह बनी रहती है। ऐसी स्थिति में उसे खेद युक्त, ईर्ष्यायुक्त, आत्मग्लानि, दैन्य, आँसू आदि से युक्त होना चाहिए तथा अल¿रण का त्याग कर देना चाहिए। वासकसज्जा, स्वाधीनपतिका आदि नायिकाओं को उज्ज्वल वस्त्रादि धारण करना चाहिए और हर्षयुक्त होना चाहिए।[8]

उपर्युक्त मत का मूल्यांकन करते समय आचार्य भरत ने नायिकाओं की विभिन्न अवस्थागत भेदों के व्यवहारिक पक्ष की ओर ध्यान दिया है क्योंकि नाट्यव्यापार में मानव मन की विभिन्न दशाओं का म×चन होता है।

अप्र संरचना तथा आन्तरिक प्रकृति का आधार–

आचार्य भरत ने स्त्री के आ"िक संरचना एवं मनःप्रकृति के आधार पर दिव्यसत्त्वा एवं मनुष्यसत्वा आदि भेद किये हैं। उन्होंने स्त्री की मनोवैज्ञानिक और प्राणिशास्त्रीय परिस्थितियों का आकलन करते हुए स्त्री के शारीरिक सौष्ठव और मन की सूक्ष्मतम प्रवृत्तियों का अनूठा विश्लेषण किया है। नायिका का प्रिय नायक उसके व्यवहार से आकर्षित होकर उसके पास सदैव उपस्थित रहता है, तब उसे 'स्वाधीनपतिका' कहते है। जब नायिका को ईर्ष्या या कलहवशात् उसका प्रियतम छोड़कर दूर चला जाता है फिर उसके न आने के कारण नायिका पश्चाताप् करती है तो ऐसी नायिका को 'कलहान्तरिता' की स×ज्ञा प्रदान की गयी है।

धृष्ट नायक की नायिका खण्डिता कहलाती है, क्योंकि जिसका पति अन्य स्त्री पर आसक्त होने के कारण नायिका के पास नहीं आ पाता, तो उसकी प्रतीक्षा करती हुई दुःखी नायिका 'खण्डिता' कहलाती है। जब नायिका दूती के द्वारा अपने प्रियतम को संकेत स्थल पर बुलाती है किन्तु किन्हीं कारणवश उसका प्रिय उस स्थल पर नहीं आ पाता तो वह अपने आपको अत्यन्त अपमानित महसूस करती है ऐसी नायिका 'विप्रलब्धा' कहलाती है। जब नायक किसी महत्त्वपूर्ण अथवा आवश्यक कार्य हेतु परदेश में निवास करता है जिसके कारण उसकी अनुपस्थिति में केशसंस्कार रहित शिथिल चोटी वाली नायिका को 'प्रोषितभर्तृका' कहा गया है। किसी विशिष्ट संकेतस्थल पर नायक से मिलने जाने वाली नायिका को 'अभिसारिका' कहते हैं। सृष्टि के विकासक्रम में मनुष्य की स्वाभाविक मूलप्रवृत्तियाँ पाशविक वृत्तियों से परिष्कृत होकर विकसित हुई है। इस वैज्ञानिक चिन्तन

Copyright © 2020 Authors

को भरत ने अपनी अद्वितीय प्रतिभा के बल से विश्लेषित किया है और इस सन्दर्भ में नायिकाओं के बाह्य भेद किये हैं– देव, असुर, गन्धर्व, राक्षस, नाग, पक्षी, पिशाच, यक्ष, ऋक्ष, व्याघ्र, मनुष्य, वानर, हाथी, मृग, मीन, ऊँट, सूकर, अश्व, भैंस, बकरी, गौ के शील या सत्त्व वाली नायिकायें।[9]

मनुष्य, देवा"नाओं, गन्धर्व, कन्याओं एवं पशु–पक्षी आदि की शारीरिक रचना और उनकी मानसिक प्रवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन अत्यन्त स्पष्ट रूप से भरत के विचारों में मिलता है। फलतः कहा जा सकता है कि ऋषि भरत ने अपने सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषणों के द्वारा मानव की मूलप्रवृत्तियों के फलस्वरूप व्युत्पन्न मनःप्रवृत्तियोंका विशुद्ध आकलन किया है।

प्राकृतिक आधार

आचार्य भरत ने नायकों के ही समान नायिकाओं के भी प्राकृतिक आधार पर तीन भेद किये हैं[10]–

1. उत्तम (उच्चवर्गीय)
2. मध्यम (मध्यमवर्गीय)
3. अधम (निम्नवर्गीय)

उपर्युक्त विवेचित नायिकाओं के समस्त भेदों में नायिकाओं की तीन प्रकार की ही प्रवृत्ति पायी जाती है। वस्तुतः यह विवेचन मुनिभरत ने स्त्रियों की त्रिविध प्रकृति के आधार पर किया है किन्तु इसका आरोपण नायिकाओं के अन्य विभाजनों पर भी किया जाता है। उत्तम प्रकृति वाली नारी में श्रेष्ठ कोटि के गुण होते हैं। यथा– मितभाषिणी, सर्वगुणसम्पन्न, सलज्ज, विनयशील, मधुरवादिनी, रूपवती, ईर्ष्यारहित, धीर एवं गम्भीर प्रकृति की होती है। उच्च वर्गीय नारी उल्टा चल रहे प्रिय से भी अप्रिय बात नहीं कहती है। वह कलाओं में निपुण होती है। विदुषी होती है। शील, शोभा आदि में काफी ऊँचे पुरुष भी इस प्रकृति की कामिनी को सभी चाहते है। यह कामतन्त्रों में कुशल एवं सदा अनुकूल बनी रहती है।[11] उच्चवर्गीय नारियों में सुदक्षिणा, इन्दुमती, कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा, सीता, उर्मिला, पार्वती, मेना, यक्षिणी, द्रौपदी, सत्यभामा, दमयन्ती आदि को रखा गया है।

मध्यम प्रकृति की नारी उत्तम प्रकृति की नारी से कुछ कम गुण सम्पन्न होती है। उनमें अल्पमात्रा में दोष होते हैं। मध्यम वर्गीय नारियाँ–जिसे अनेक पुरुष चाहें और वह भी उसे चाहें। वह कामोपचार में कुशल होती है। उनका क्रोध थोड़ी देर के लिए ही होता है।[12] इसके अन्तर्गत ग्रन्थों में मिलने वाली नगरवधुयें आदि का वर्णन किया गया है, अधम

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

नारियाँ अकारण ही गुस्सा करने वाली, शील से दुष्ट होती है तथा चपला, रूखी और दीर्घरोषा होती है।[13] जैसे वेश्यादि या रानियों की सहायिकायें आदि।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि मानवीय प्रवृत्ति त्रिगुणात्मक होती है। इसी को आधार मानकर यह नायिका विभाजन किया है। वास्तविक रूप में प्रकृति के तीन गुणों के आधार पर इस विभाजन को मनीषियों ने स्वीकार किया है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भरतकृत नायिका विभाजन अत्यन्त कठिन हैं नाट्यशास्त्र में नायकों के भेद की अपेक्षा नायिका भेद का अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस कारण स्त्रियों की सामाजिक स्थिति, मानसिक स्थिति एवं प्राकृतिक स्थिति सर्वथा पृथक् होती हैं। इसीकारण उनके आचार–व्यवहार इत्यादि पर अधिक बल दिया गया है। उनके अनुसार उनके स्वभाव, क्रिया–कलाप, चेष्टा तथा अ"रचना आदि में परिवर्तन के कारण उनकी प्रवृत्तियों में सदैव परिवर्तन होता रहता है। इस परिवर्तन की श्रृंखला यद्यपि अनन्त है तथापि मुनि भरत ने उसे विशिष्ट आयामों में बाँधने का प्रयास किया है। नायिका भेद के वर्णन के अनुसार श्रृंगार रस के वर्णन में आलम्बन विभाव के रूप में वर्णित स्त्री ही नायिका की स×ज्ञा प्राप्त करती है। भरत ने कामशास्त्र के मनोवैज्ञानिक आधार पर नायिका भेद का निरूपण करने का प्रयास किया है। इसीकारण स्त्रियों की सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक परिस्थितियाँ नाट्यशास्त्र में स्पष्टरूप से परिलक्षित होती है। उन्होंने दूसरा भेद मनुष्यसत्त्वा एवं देवसत्ता के रूप में किया है जिसके सौन्दर्य में कहा जा सकता है कि स्त्री के शरीर और मन की सूक्ष्म ग्रन्थियों से उसकी प्रकृतिगत मौलिक प्रवृत्तियों का योगदान रहता हैं क्योंकि व्यवहार में भी यह देखा जाता है कि उसमें पाशविक वृत्तियों का समावेश होता है जो कि उसे सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रतिकूल उच्छृंखलता की ओर अग्रसर करता है। यद्यपि स्त्रियों पर सामाजिक बन्धन प्राचीनकाल से ही अत्यन्त दृढ़ता से लगाये जाते रहे हैं परन्तु उसकी प्राकृतिक मूलप्रवृत्तियाँ उसे उच्छृंखलता प्रदान करती है। अतः यह कहा जा सकता है कि भरत सम्मत मत, तत्कालीन सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं प्राणिशास्त्रीय सिद्धान्तों के आधार पर प्रस्तुत किया है। यही मत परवर्ती आचार्यों के लिए नारियों के वर्गीकरण हेतु एक आधार–शिला के समान है। तथा यही मत कालान्तर में नये सर्वजनात्मक रूपों में परिवर्तित होता रहा है। परवर्ती संस्कृत विद्वानों ने भरत सम्मत मत की आलोचना की है, किन्तु उनकी यह आलोचना भरतकालीन स्थितियों का आकलन करने पर निराधार साबित होती है क्योंकि भरत ने अपनी समकालीन स्थितियों को ध्यान में रखते हुए नायिकाओं का वर्गीकरण किया था किन्तु पूर्व की परिस्थितियाँ एवं वर्तमान की परिस्थितियों पर विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि स्त्री की स्थिति निरन्तर

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

परिवर्तनशील रही है। ऐसी परिस्थिति में प्राचीनशास्त्रीय सिद्धान्तों का मूल्यांकन तत्कालीन परिवेश और परिस्थिति के अनुरूप ही किया जा सकता है और इसके विपरीत स्थितियों में वे सिद्धान्त तो प्रदान कर सकते हैं किन्तु वे मूल्यहीन सिद्ध होंगे।

अतः आचार्य भरत सम्मत मत अत्यन्त सूक्ष्म एवं मनोवैज्ञानिक चिन्तन पर आधारित है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 मनुस्मृति–9/45

2 अशक्त्या पुरुषैः सा तु प्रयोक्तं स्त्रीजनादृते।
ततोऽसृजन महातेजा मनसाप्सरसो विभुः।।– नाट्यशास्त्र–1/46

3 रूपकरहस्य, पृ0 99

4 संस्कृतनाटक–ए0वी0कीथ, पृ0 329, संस्करण 1965

5 कामोपचारो द्विविधो नाट्यमध्येऽभिधीयते।
बाह्यश्चाभ्यन्तरश्चैव नारी पुरुषसंक्षयः।।
आभ्यन्तरः पार्थिवानां स च कार्यस्तु नाटके।
बाह्यो वेश्यागतश्चैव स च प्रकरणे भवेत्।।–ना0शा0, तृतीय भाग 48, 49

6 ना0शा0, तृ0अ0 24/51, 152 प्रथम संस्करण, 1983

7 तव वासकसज्जा च विरहोत्कण्ठितापि वा।
स्वाधीनभर्तृका चापि कलहान्तरिता वा।।

8 नाट्यशास्त्र, तृतीय भाग, 24/221–224, प्रथम संस्करण, 1983

9 देवतासुरगन्धर्वरक्षोनागपतत्रिणाम्।
पिशाचयक्षव्यभानां नर–वानर–हस्तिनाम्।।99
मृगमीनोष्दूमकररसरसूकरवाजिनास्।
महिषाषगवादीनां तुल्यशीलाः स्त्रियः स्मृताः।।100 – ना0शा0 तृतीय भाग अ0 24, प्रथम संस्करण

10 सर्वासामेव नारीणां त्रिविधा प्रकृतिः स्मृता।
उत्तमा मध्यमा नीचा वेश्यानां तु स्वभावजः।।

11 ना0शा0–आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी–23/33.34.35

12 ना0शा0–आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी–23/36.37

13 ना0शा0–आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी–23/38

Copyright © 2020 Authors